Gmail econtent Of Arts <econtentofarts@gmail.com>

M A (2ndSemester)Essay On Privatization,Anjani Kumar Ghosh, Political Science.

1 message

ANJANI GHOSH <anjanighosh51@gmail.com> Wed, Jul 8, 2020 at 8:45 AM
To: econtentofarts@gmail.com

भारत में आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया के तहत 1991 में निजीकरण की दिशा में कदम उठाये गये जबकि सरकार ने सार्वजनिक उपक्रमों में 20 प्रतिशत अविनियोग करने का निर्णय लिया । उदारीकरण तथा निजीकरण के द्वारा भारत से कही छोटे देश जैसे थाईलैण्ड, इण्डोनेशिया, टर्की, ट्यूनीशिया, ब्राजील, कोरिया तथा मलेशिया आर्थिक विकास में इससे जब आगे निकल गये तो हमें इस दिशा में सोचने को मजबूर होना पडा । आज भी हम निजीकरण को निर्भीकता से स्वीकरने में सकुचा रहे हैं ।

भारत में निजीकरण को अपनाने के पीछे सबसे प्रमुख कारण सार्वजनिक उपक्रमों की अकुशलता कहा जा सकता है । हमारे यहाँ संगठित औद्योगिक क्षेत्र का लगभग एक-तिहाई भाग सार्वजनिक क्षेत्र का है । 240 केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में 2,52,554 करोड़ रुपये की पूँजी लगी हुई है । लगी पूँजी पर केवल 16.2 प्रतिशत का कुल लाभ प्राप्त हो रहा है ।
इन उपक्रमों में जो लाभ प्राप्त कर रहे है इनमें से अधिकांश एकाधिकारी क्मनियां हैं । यदि इसमें विभागीय उपक्रम, जैसे रेलवे, डाक व तार बन्दरगाहों आदि तथा राज्य सरकारों के उपक्रमों को भी शामिल कर लिया जाये तो यह विनियोग कई गुना हो जायेगा ।

सार्वजनिक क्षेत्र की अकुशलता के अतिरिक्त विश्व के घटनाक्रमों के तहत भी सरकार ने निजीकरण पर बल देना प्रारम्भ किया है । उदारीकरण की नीति भी निजीकरण का एक प्रमुख करण रही है । सार्वजनिक क्षेत्र के लिये सरकार ने अरक्षित उद्योगों की संख्या को कम करके केवल 6 कर दिया है ।

अब केवल सामरिक महत्व के उद्योग जैसे परमाणु ऊर्जा, भारत सरकार के परमाणु ऊर्जा विभाग की अधिसूचना संस्था एस. ओ. 212 (ई) दिनांक 15 मार्च, 1995 के परिशिष्ट में दर्शाई गई वस्तुएँ तथा रेल परिवहन ही सार्वजनिक क्षेत्र में रह गये हैं । खनिज नीति में भी निजी विनियोग का स्वीकृति प्रदान कर दी गयी है ।
भारत में निजीकरण को प्रेरित करने वाले घटक प्रमुख रूप से निम्नलिखित हैं:
: 1) भारत में विदेशी कम्पनियों एवं विनियोजकों की उत्सुकता:

विकसित पूँजीवादी देशों में कम्पनियों एवं विनियोजक आर्थिक मंदी के परिणामस्वरूप अति-उत्पादन तथा बेरोजगारी की समस्या का सामना कर रहे हैं अतः इन समस्याओं से निपटने के लिये इनका ध्यान तृतीय विश्व के देशों की ओर गया जहाँ इन्हें विस्तृत बाजार उपलब्ध है तथा कम प्रतियोगिता का सामना करना पड़ेगा ।

इस दृष्टि से इन्हें भारत सर्वथा उचित नजर आ रहा है । भारत भी विश्व परिवर्तनीय इन आर्थिक घटनाओं से अछूता नहीं रहा है और सरकार ने अन्य विकासशील देशों के विकस से प्रेरित होकर आर्थिक सुधारों एवं उदारीकरण की नीति लागू करके देश में प्रत्यक्ष पूँजी निवेश तथा उद्यम स्थापित करने के द्वार खोल दिये । इससे भारत में निजीकरण को प्रोत्साहन मिला ।

(2) आर्थिक सुधार व उदारीकरण:
सरकार ने जुलाई, 1991 में अनेक घोषणाएँ आर्थिक सुधार व उदारीकरण हेतु की इनमें सार्वजनिक क्षेत्र के लिये अरक्षित उद्योगों में कमी, लाइसेंस समाप्ति एवं सरलीकरण, बड़े औद्योगिक घरानों को विस्तार की छूट, विदेशी विनियोजकों को उपक्रम में 51 प्रतिशत तक समता पूँजी रखने की छूट, रुपये का अवमूल्यन, रुपये की पूर्ण परिवर्तनीयता, फेरा एवं अन्य एम.आर.टी.पी अधिनियमों में ढील, सीमा व उत्पाद शुल्कों में कमी, आदि प्रमुख रूप से शामिल हैं । इन सुधारों व उदारीकरण नीतियों के परिणामस्वरूप एक ऐसा वातावरण तैयार हुआ है जिसमें निजी उद्यमी अधिक स्वतंत्रता के साथ कार्य कर सकते हैं ।

(3) लाइसेंस की अनिवार्यता वाले उद्योगों की संख्या में कमी:

सरकार द्वारा देश में निजीकरण को बढ़ावा देने के लिए उद्योगों के लिए लाइसेंस लेने की अनिवार्यता को धीरे-धीरे कम किया जा रहा है । 1991 की औद्योगिक नीति में 18 उद्योग वर्ग ऐसे थे, जिनके प्रारम्भ करने के लिए लाइसेंस लेना अनिवार्य था, किन्तु आज उनकी संख्या

से भी घटाकर 5 कर दिया है । वर्तमान में केवल आणविक ऊर्जा तथा सामाजिक सुरक्षा से सम्बन्धित उद्योगों की स्थापना के लिए ही लाइसेंस अनिवार्य है ।

4) भारतीय उद्यमों की प्रतियोगिता शक्ति में वृद्धि की इच्छा:

भारतीय उद्योगों को गत चालीस वर्षों से सरकार ने संरक्षण प्रदान कर रखा था । इससे इन उद्यमों ने न तो लागत कम करने का प्रयास किया और न ही अपनी वस्तु की किस्म में सुधार किया । उदाहरणार्थ, 1956 में स्टील उद्योग की तकनीक हमारे यहाँ विश्व की तुलना में आधुनिकतम थी परन्तु आज हम स्टील बनाने की तकनीक में 20 वर्ष पीछे हैं ।

अतः हमारी स्टील की लागत विश्व के अन्य देशों की लागत से दोगुनी है । हम अपने यहाँ छः मिलों में जितना उत्पादन करते है उतना उत्पादन कोरिया की केवल एक मिल करती है । स्पष्ट है कि यदि हमें अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में अपनी वस्तु बेचनी है तो भारतीय उद्यमों का गुणवत्ता व कीमत की दृष्टि से प्रतियोगी बनाना होगा । इसके लिए आवश्यक है कि भारत की औद्योगिक अर्थव्यवस्था का स्वरूप प्रतियोगी हो और यह निजीकरण के द्वारा भी सम्भव है ।

(5) सार्वजनिक उपक्रमों की अंश पूँजी का विनिवेश:

भारत सरकार ने निजीकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम यह उठाया है कि कुछ सार्वजनिक उपक्रमों की अंश पूँजी से जनता में विनिवेश (Disinvestment or Divest) किया है । सर्वप्रथम सरकार ने वर्ष 1991-92 में 30 सार्वजनिक उपक्रमों के अंशों का विनिवेश किया, जिससे 8,721 करोड़ रुपये प्राप्त हुए । इसके बाद से विनिवेश की प्रक्रिया जारी है । सन् 2000-01 में 10,000 करोड़ रुपये व 2001-02 में 12,000 करोड़ रुपये लोक उपक्रमों के विनिवेश से प्राप्त करने का लक्ष्य रखा गया ।

6) उत्पादन वृद्धि का व्यापक आधार:

भारत में औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि के सभी आवश्यक घटक उपलब्ध हैं । यहां तकनीक एवं प्रबंधकीय कुशलता उपलब्ध है, अपेक्षाकृत सस्ता तम है, प्राकृतिक साधन प्रचुर मात्रा में है, आधारित संरचनाएँ विकसित हो चुकी हैं और सबसे अधिक महत्वपूर्ण तैयार माल की खपत के लिये बडा घरेलू बाजार उपलब्ध है ।

अतः निजी क्षेत्र को बढावा देने पर उत्पादक कम कीमत पर उच्च किस्म की वस्तु का उत्पादन करने में सक्षम हो जायेंगे । ऐसा होने पर वे न केवल घरेलू बाजार में प्रभुत्व स्थापित रख सकेंगे वरन् विदेशी बाजार में भी अपनी वस्तुओं को बेच सकेंगे ।

(7) सार्वजनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित उद्योग वर्गों की संख्या में कमी:

भारतवर्ष की औद्योगिक नीति में सदैव से ही कुछ उद्योगों में सरकारी क्षेत्र के लिए ही आरक्षित किया जाता रहा है । 1956 की नीति में 17 उद्योगों को सरकारी क्षेत्र के लिए आरक्षित किया गया । बाद में इनकी संख्या में कटौती की गई ।

1991 की नीति में इनकी संख्या को घटाकर 8 कर दिया, किन्तु 1993 में पुनः इनकी संख्या को घटाकर 6 ही कर दिया गया । अब यह संख्या 4 रह गई है । इस प्रकार सरकार ने सार्वजनिक क्षेत्र के लिए उद्योगों का आरक्षण कुछ ही उद्योगों तक सीमित कर निजीकरण को बढावा दिया है ।

(8) निजी क्षेत्र में बैंकों की स्थापना की अनुमति:

सरकार ने निजीकरण को बढावा देने के लिए अब निजी साहसियों को बैंकों की स्थापना की छूट दे दी है । इसके साथ ही सरकार ने राष्ट्रीयकृत बैंकों की अंश पूँजी में से 70 प्रतिशत निजी क्षेत्र के विनियोजकों अर्थात् जनता को जारी करने की व्यवस्था कर दी है ।

9) सरकार पर बढ़ता ऋण भार:

सरकार ने 1956 की औद्योगिक नीति के अंतर्गत सार्वजनिक क्षेत्र को प्राथमिकता के आधार पर विकसित करने का निर्णय लिया था । सातवीं योजना तक हम इसी पर अमल करते रहे । इस समयावधि में इस रणनीति को कार्यरूप देने के लिये सरकार ने अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं व विदेशी सरकारों से बडी मात्रा में ऋण प्राप्त किये ।

इन राशियों से यह परियोजनाएँ तो पूरी हो गयीं, परन्तु वह ऋणों की वापसी करने में सक्षम न हो सकी । अधिकांश सार्वजनिक उपक्रम घाटे में चलते रहे और सरकार उन्हें ऋणों के द्वारा उपलब्ध राशि से सहायता प्रदान करती रही । अत्यधिक ऋण व ब्याज हो जाने के करण सरकार 'ऋण जाल' में प्रवेश कर गयी । इस समस्या का निदान निजीकरण में ही है, इससे इन उद्यमों का कुशलतापूर्वक संचालन हो सकेगा तथा सरकार को ऋण नहीं लेने पड़ेंगे, उसके देयताएं कम हो जायेंगी ।

: भारत में निजीकरण की जो प्रक्रिया चल रही है व उद्यमो को अधिक प्रतियोगी बनाने की बात कही जा रही है, उसमें अनेक कठिनाइयों है जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं:

(1) बेरोजगारी का भय:

निजीकरण की नीति से सबसे बडा भय कर्मचारियों में बेरोजगारी फैल जाने का है । निजी कम्पनियाँ उच्च तकनीक को अपनाते हुये उत्पादन करेंगी जिससे रोजगार के अवसर उपलब्ध नहीं होंगे । इसका उदाहरण पेप्सी फूड प्रोडक्टस् है जिसने बडी मात्रा में रोजगार देने का वायदा किया था, परन्तु वास्तव में बहुत ही कम लोगों के रोजगार उपलब्ध कराया । निजीकरण से अनेक कर्मचारियों को कम से हटाया जायेगा, अतः वह इससे भयभीत हैं तथा इसका विरोध कर रहे हैं ।

(2) प्रतियोगिता हेतु अवरूद्ध मार्ग:

सरकार ने निजीकरण की प्रक्रिया में विदेशी विनियोजकों, उत्पादकों व बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को प्रतियोगिता हेतु अर्थात् भारत में उत्पादन हेतु आमंत्रित तो कर लिया, परन्तु घरेलू उत्पादकों व कम्पनियों को जो सुविधाएँ प्राप्त होनी चाहिये थीं वह प्रदान नहीं कीं ।

इन घरेलू उत्पादकों में अन्य देशों की भाँति करों में दीर्घकलीन छूट प्रदान करनी चाहिये, उत्पादन में प्रयुक्त आगत (Inputs) सस्ती कीमत पर अर्थात् जिस कीमत पर यह अन्य प्रतियोगी देशों में उपलब्ध हैं प्रदान करने चाहिये तभी घरेलू कम्पनियों से यह आशा की जानी चाहिये कि वह प्रतियोगिता ठीक प्रकार से कर सकेंगी ।
: 3) उच्च तकनीक वाली वस्तुओं के उत्पादन को प्राथमिकता:

निजीकरण की एक समस्या है कि इन कम्पनियों की इच्छा केवल उपभोक्ता वस्तुओं जिनमें से अधिकांश विलासिता की वस्तुएं हैं, का ही उत्पादन करना चाहती हैं । इसका कारण यह है कि इन वस्तुओं के उत्पादन हेतु भारत में जहाँ कच्चा माल उपलब्ध है वहाँ इनमें भारी लाभ की सम्भावना मौजूद है ।

अतः हमें केवल वस्तुओं के उत्पादन की छूट प्रदान करनी चाहिये जिनमें अत्यधिक आधुनिक तकनीकी की आवश्यकता है और जिससे हमारी आधारित संरचना का आधार मजबूत होता हो ।

(4) अनावश्यक दबाव:

निजीकरण की नीति हमारे स्वतः के प्रयत्नों का परिणाम होनी चाहिये थी, परन्तु अमेरिकी दबाव व आर्थिक साम्राज्यवाद की नीति का परिणाम हमारे यहाँ निजीकरण व उदारीकरण रहा है । अमेरिका चाहता है कि भारत 'बौद्धिक सम्पदा अधिकार' को स्वीकार करे । इससे हमारे यहाँ औषधियों की कीमतों में बेतहाशा वृद्धि होगी और हमारी अर्थव्यवस्था बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के हाथों में चली जायेगी ।

इसी के साथ वह भारत पर 'उत्पादन पेटेंट' कानून को लागू करने के लिये भी दबाव डाल रहा है । इसे स्वीकार करने के परिणामस्वरूप हम कृषि एवं पशुपालन, इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर, इंजीनियरिंग तथा औषधियों का उत्पादन करने के लिये बहुराष्ट्रीय कम्पनियों पर आश्रित हो जायेंगे । हमारी सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था विदेशियों की गिरफ्त में आ जायेगी । अतः कृषि व उद्योग क्षेत्र दोनों इसका प्रबल विरोध कर रहे हैं ।